लेख

इला भट्ट: एक जीवनी

वीणा शिवपुरी

इला भट्ट (बीच में) सेवा की महिलाओं के साथ

आज़ादी की रोशनी, उम्मीदों की खुशबू
इस मोड़ के आगे है, एक क़दम और बस, एक क़दम

कुछ ऐसे ही माहौल में 7 सितम्बर 1933 को इला भट्ट का जन्म हुआ। घर में पिता और दादा वकील थे। ननिहाल में गांधी जी का प्रभाव था। नानाजी ने दांडी मार्च में हिस्सा लिया था और दो मामा जेल भी गए थे। मां अधिक नहीं पढ़ सकीं लेकिन कविताएं लिखा करती थीं। ज़ाहिर है, इला को पढ़ाई-लिखाई और ऊंचे आदर्शों की विरासत मिली। उनकी स्कूल-कॉलेज की शिक्षा सूरत शहर में हुई।

युवा मन पर दो बड़े प्रभाव

देश आज़ाद हो चुका था। पहली जनगणना हो रही थी। युवा लड़के-लड़कियों की मदद से आंकड़े इकट्ठा किए जा रहे थे। उन्हीं में शामिल थीं इला भट्ट। साइकिल पर बस्ती-बस्ती घूम कर उन्हें लोगों से मिलने और उनके बारे में जानने का मौक़ा मिला। इला ने पहली बार ग़रीबी को नज़दीक से देखा जिसने उनके मन को झकझोर दिया। उनके दिल को

छूने वाली दूसरी बात थी अपने भावी पति से मुलाकात। जनगणना के दौरान उनके साथ काम करने वाले, कपड़ा मिल मज़दूर के आदर्शवादी बेटे, रमेश भट्ट ने उन्हें बहुत प्रभावित किया। युवा मन पर पड़े इन दो प्रभावों ने उनके व्यक्तिगत और कार्यकारी जीवन की दिशा तय कर दी।

पिता को चिंता थी कि आराम में पली इला क्या रमेश के साथ सुखी रह पाएगी। इला ने फ़ैसला किया कि वे एक साल तक गांव में सिर्फ़ साठ रुपये महीने पर जी कर दिखाएंगी। इला ने साबित कर दिया कि वे सुख-सुविधाओं के बिना भी खुश रह सकती हैं। 1956 में इला भट्ट और रमेश भट्ट ने विवाह कर लिया।

कामकाजी जीवन की शुरूआत

1955 में कानून की पढ़ाई पूरी करके वे गांधी जी द्वारा स्थापित कपड़ा श्रमिक संगठन (टीएलए) में काम करने लगीं। यहां वे मज़दूरों की समस्याएं सुलझाती थीं। कभी बातचीत से तो कभी वकील के रूप में अदालत जाकर। 1960 में तीन साल के लिए उन्होंने रोज़गार दफ़्तर में सरकारी नौकरी भी की। आख़िर में वे फिर से टीएलए से जुड़ गईं।

आने वाले जीवन में, जिस काम के लिए उन्हें जाना और माना गया उसकी नींव इसी समय पड़ी। इस समय घटी दो घटनाओं ने उन पर गहरा असर डाला। पहली थी 1968 में अहमदाबाद की दो बड़ी कपड़ा मिलों का बंद होना। हज़ारों मज़दूर बेरोज़गार होकर आंदोलन कर रहे थे। उनकी पत्नियां छोटे-मोटे काम करके भूखे बच्चों का पेट भरने की कोशिश में लगी थीं। वे बोझा उठातीं, फेरी लगातीं, कपड़े सीतीं, लोगों के घरों में चौका-बरतन करतीं। इला का ध्यान, औरतों की दयनीय हालत पर गया जो बहुत ज़्यादा मेहनत करती थीं, लेकिन कमाती बहुत कम थीं। इसी समय घटी एक और घटना ने इला को ऐसी ही अनेक औरतों के जीवन से परिचित कराया। 1969 में अहमदाबाद में साम्प्रदायिक दंगे छिड़ गए। इला टीएलए सदस्यों के साथ शांति और सहायता के कामों में लगी थीं। इस बार उन्होंने न सिर्फ़ ग़रीबी और लाचारी बल्कि हिंसा और मौत को भी क़रीब से देखा। उजड़े, लुटे हुए, बेघरबार परिवार देखे। इसी समय किए गए सर्वेक्षण से मालूम हुआ कि हज़ारों औरतें भारी बोझ लाद कर ठेले खींचतीं हैं, पुराने कपड़े बेचती हैं, कतरनों से गुदड़ी बनाती हैं, बीड़ी बनाती हैं या सब्ज़ी का धंधा करती हैं।

ये सभी औरतें चाहे हिन्दू थी या मुसलमान, ग़रीब थीं। अपने परिवार को संभालने और कमाई करने का दोहरा बोझ उठा रही थीं। वे असंगठित क्षेत्र में थी यानि सरकार की नज़र में वे मज़दूर नहीं थीं। उनके काम की मान्यता या उनका दर्जा नहीं था। बीमा या बैंक कर्ज की सुविधा भी नहीं थी। वे श्रम बाज़ार में अदृश्य रहते हुए अपना परिवार पाल रही थीं।

एक नई दिशा, एक नया जोश

एक प्रशिक्षण कार्यक्रम में भाग लेने इला बेन को इज़राइल जाने का मौका मिला। वहां ट्रेड यूनियनों को सहकारी संगठनों की तरह काम करते देख, वे बहुत प्रभावित हुईं। उन्हें एक नई दिशा मिली। उन हज़ारों औरतों के लिए जो कठिन हालात में खुद का धंधा कर रही थीं।

सेवा की महिलाओं के साथ नारे लगाती इला भट्ट

अहमदाबाद वापस लौट कर पहली कोशिश हुई बोझा ढोने वाली औरतों के लिए। इला बेन ने उनकी कम मज़दूरी के बारे में एक लेख लिखा। जवाब में व्यापारियों ने इसको ग़लत बताते हुए अख़बारों में बढ़े हुए रेट छपवाए। इला बेन ने उन दरों के पर्चे छपवा कर बोझा उठाने वाली औरतों के बीच बांट दिए। अब व्यापारी अपने ही झूठ के जाल में फंस गए थे। उन्हें बढ़े हुए रेट देने पड़े। यह एक बड़ी जीत थी।

सेवा का जन्म

संगठित होने वाला अगला समूह था पुराने कपड़े बेचने वाली औरतों का। उन सबने खुशी-खुशी तीन रुपये साल का सदस्यता शुल्क दिया। यह शुरूआत थी *सेवा* यानि *सैल्फ़ एम्प्लॉयड विमेन्स असोसिएशन* की। बड़ी कोशिशों के बाद 12 अप्रैल 1972 को *सेवा* एक ट्रेड यूनियन के रूप में पंजीकृत हुई।

अधिकारी सवाल उठा रहे थे। अपने संगठन को आप ट्रेड यूनियन कैसे कह सकती हैं? आपका काम क्या है? मालिक कौन है? लड़ाई किसके ख़िलाफ़ होगी? आदि। बड़ी मुश्किल से समझाया गया कि ट्रेड यूनियन का काम सिर्फ़ लड़ना नहीं बल्कि अपनी मदद करना भी होता है। यदि लड़ाई होगी भी तो किसी व्यक्ति के ख़िलाफ़ नहीं बल्कि शोषणकारी व्यवस्था के ख़िलाफ़ होगी।

ऐसा नहीं है कि इसके बाद रास्ता आसान हो गया। रुकावटें और उलझनें आती रहीं लेकिन अब कोई औरत अकेली नहीं थी। वे सब मिल कर एक दूसरे का हौसला बढ़ाती और हल खोजतीं। चर्चाओं और बैठकों से पता लगा कि औरतों के पास धंधे के अपने औज़ार नहीं है और न खरीदने के लिए पैसा। बैंक कर्ज़ नहीं देता, महाजन की ब्याज़ दर बहुत ज़्यादा हैं। एक दिन चंदा बेन पूछ बैठी "हमारा अपना बैंक क्यों नहीं हो सकता?"

"बैंक तो धनी लोगों के होते हैं, हम तो ग़रीब हैं।" किसी और ने जवाब दिया। "उसके लिए तो कम से कम लाख रुपया चाहिए", सबके दिल बैठ गए।

संगठन की ताक़त ने फिर अपना असर दिखाया। सदस्यों की दस-दस रुपये की छोटी बचत से मई 1974 में शुरू हुआ *श्री महिला सेवा सहकारी बैंक लिमिटेड*। संसार में औरतों का पहला अपना बैंक। आज यह बैंक अहमदाबाद की एक बहुमंज़िला इमारत में व्यापार कर रहा है। इला बेन कहती हैं, "हम जानते हैं कि औरतें किन

मंडी में सब्ज़ी बेचने वाली औरतों के बीच इला भट्ट

हालात में जीती हैं, इसलिए खतरा उठा कर भी कर्ज़ देते हैं। अन्य बैंक ऐसा नहीं करते। खुशी की बात यह है कि कर्ज़ लौटाने की दर हमारे यहां उनसे अच्छी है। यहां सभी औरतें जानती हैं कि यह बैंक उनका अपना है।"

सेवा और इला बेन का कार्यक्षेत्र फैला

1976 में *सेवा* ने अपने काम का दायरा देहातों में भी फैलाया। रेगिस्तान की औरतें पीढ़ियों से घर में दस्तकारी करती और मवेशी पालती थीं। उनके इन घरेलू कामों को बाज़ार तक लाकर कमाई का ज़रिया बनाया गया। बाहरी एजेन्सियों की मदद से उनका हुनर सुधारा।

एक आवर्ती कोष खोला गया ताकि वे कच्चा माल और मवेशी ख़रीद सकें। आज कच्छ की दस्तकारी विदेशों में बिकती है। यायावर जातियां एक जगह बस गई हैं। उनके बच्चे स्कूल जा रहे हैं।

सेवा ने अपने काम के शुरूआती दौर में सात मुख्य धंधों को चिन्हित किया था। समय के साथ यह दायरा और सदस्यों की संख्या बढ़ती गई। आज *सेवा* की सदस्य संख्या 3,18,527 है।

इसी प्रकार इला बेन का काम गुजरात से निकल कर दिल्ली व अन्य प्रांतों और फिर विश्व के मंचों तक पहुंचा। *सेवा* का उदाहरण दुनिया की सभी ग़रीब औरतों के लिए आशा की किरण बना।

देश-विदेश में मिली सराहना

- 1977 में इला भट्ट को सामुदायिक नेतृत्व के लिए मेगसेसे पुरस्कार दिया गया।
- मानवीय पर्यावरण में बदलाव लाने के लिए 1984 में उन्हें राइट लाइवलीहुड पुरस्कार मिला।
- भारत सरकार ने उन्हें 1985 में पद्मश्री और 1986 में पद्मभूषण प्रदान किया।
- अनेक विश्वविद्यालयों ने इला भट्ट को डॉक्टर की मानद उपाधि से भी नवाज़ा है।
- 1987 में वे राज्यसभा की सदस्य मनोनीत हुईं।

वे महिला विश्व बैंक की संस्थापकों में से हैं। रॉकफैलर फ़ाउन्डेशन की न्यासी हैं। भारत के पहले राष्ट्रीय महिला आयोग से भी जुड़ी रहीं। अभी हाल में उन्हें प्रतिष्ठित रैडक्लिफ़ पुरस्कार भी मिला है।

इला भट्ट को मिलने वाले पुरस्कारों की सूची बहुत लम्बी है। पुरस्कार साबित करते हैं कि उनके काम ने हज़ारों, लाखों ग़रीब, असहाय औरतों का जीवन बदल दिया है। आज वे औरतें संगठित हैं, सशक्त हैं, आत्मविश्वासी हैं और आर्थिक रूप से अपने पैरों पर खड़ी हैं।

इला बेन मानती हैं कि वे मात्र *सेवा* का चेहरा हैं। इन पुरस्कारों के पीछे *सेवा* की लाखों सदस्यों की मेहनत और इच्छाशक्ति है।

इला भट्ट को समझने के लिए उनका सादा जीवन और 'सेवा' को समझना ज़रूरी है। साथ ही ज़रूरी है उनके विचारों को समझना।

इला भट्ट – एक सोच

इला भट्ट स्वयं कहती हैं कि वे आज़ादी की लड़ाई के आखिरी हिस्से की पैदाइश हैं। जब घर-बाहर, स्कूल-कॉलेज में आज़ादी की चर्चा होती थी। गांधी जी के आदर्शों और सिद्धांतों की बात होती थी। सच्चाई, शांति और अहिंसा जैसे मूल्यों पर कोई समझौता नहीं हो सकता था।

इन सबने मिलकर इला को वह बनाया जो वे आज हैं। वे मानती हैं कि औरतें स्वाभाविक रूप से अगुवाई कर सकती हैं। औरतें ही परिवार और समाज में बदलाव लाती हैं, और वह भी प्यार, शांति और अहिंसा से।

इला भट्ट कहती हैं कि हमने धरना, सत्याग्रह और हड़ताल का इस्तेमाल किया है। कभी-कभी मजबूरी में अदालत भी गए हैं लेकिन हम बातचीत से मसले सुलझाना चाहते हैं।

इला भट्ट, विकास की गांधीवादी विचारधारा की समर्थक हैं जिसके केंद्र में मनुष्य हो। वे नई तकनीकों और भूमंडलीकरण को पूरी तरह खारिज नहीं करतीं। इनसे कई फायदे भी हैं। वे शक्ति संतुलन को ग़रीबों और औरतों के पक्ष में बदलना चाहती हैं।

इला भट्ट और *सेवा* की सोच है कि संघर्ष और असफलताएं जीवन का हिस्सा हैं। संगठन हमें अपनी नाकामयाबी से कुछ सीख कर आगे बढ़ने की ताक़त देता है। शायद यही वजह है उन दोनों की सफलता की।

वीणा शिवपुरी *लेखिका व विकास कार्यकर्ता हैं।*